अचलोत्तम
गुरुज्ञान गीता
प्रकाशक
बम्बई वाले पं. श्रीधर शिवलालजी
किशनगढ़

॥ ॐ श्रीहरिगुरू सच्चिदानन्दाय नमः ॥

अचलोत्तम गुरूज्ञान गीता

भाषा जोधपुरी मूल रचना शिव-पार्वती संवाद

अनुवादकर्त्ता:- तत्वज्ञ स्वामी रामप्रकाशजी महाराज "अच्युत" जोधपुर

प्रकाशक:- बम्बई वाले पं. श्रीधर शिवलालजी

ज्ञानसागर छापाखाना, कचहरी चौक, किशनगढ़-सिटी-३०५८०२

नवरात्रा

संवत् २०७१

नं. ३७५११०

मूल्य ३०) रू.

फोन न. 01463-244160

गुरूज्ञान गीता के दो शब्द

विश्व में आधुनिक सन्त वाणी के विशाल साहित्य में विविध रूपान्तरों से अलङ्कारिक विश्लेषणों युक्त गुरू-महिमा, गुरू पारख, गुरू मर्यादा, गुरू ज्ञान के नाम से अनेक शीर्षकों का गुरू महत्व, गुरूत्वशील पद्यात्मक छन्दों भजनों, श्लोकों में जो भी शांतरस गुरू-तत्व के सम्बन्ध में मिलता हैं, उन सबका मूल स्त्रोत, मूलाधार श्री शिव-पार्वती संवादमय गुरू ज्ञान गीता ही हैं।

शिव-पार्वती संवाद गुरू-गीता मूल संस्कृत के १३९ श्लोकों में होने के कारण सर्व जनसाधारण के लिए महत्व-प्रद गुरू महिमा का पठनीय ज्ञान होना दुर्लभ हैं, जिसे सरलानुवाद भाषा करने हेतु कई इष्ट मित्रों की प्रेरणामय उत्कण्ठा होने पर उन मूल श्लोकों को विषयगत चार भागों में **'गजरा'** के नाम से सुलभ बना दिये हैं। चूकि विष्णुमाला १२८ दाने की होती हैं, जिसमें प्रति गजरा ३२ का बनता हैं। उपसंहार में गीता पाठी का अधिकारी प्रयोजन कहते हुए सरल और सरस तैयार कर दी हैं जो सर्व सुलभ आशान्वित लाभदायक होगी।

वस्तुत: विश्व में गुरू-तत्व के कृतज्ञ हुए बिना कृतघ्न प्राणी कहीं भी कुछ भी सफलता नहीं पाता हैं। चाहे व्यवहारिक क्षेत्र हो और चाहे आध्यात्मिक प्राङ्गण हो गुरू का गुरूत्व तो सदैव एवं सर्वत्र सम्मान्य रहा हैं और रहेगा। इसी अमरत्व का मूल माला रूप में प्रस्तुत हैं। **पं. इन्द्रमोहन जी गौड़, अध्यक्ष ज्ञान सागर प्रेस, किशनगढ़** इसका प्रकाशन करके गुरू-उपासकों को अनुपम सहयोग दिया हैं, अत: इस पुस्तक का पुनर्मुद्रणाधिकार उन्हें अर्पित करते हैं।

उत्तम आश्रम जोधपुर **गुरूचरणानुचार-सन्त रामप्रकाशाचार्य 'अच्युत'**

॥ ॐ श्री सतगुरूभ्यो नमः ॥

अचलोत्तम गुरू ज्ञान गीता

(भाषा-जोधपुरी)

मंगलाचरण

उत्तम सतगुरू संत वर, उत्तम राम गुरूदेव।
श्री वैष्णव हरि हर नमो, गुरू गीता कहुं भेव ॥ १ ॥

श्री सच्चिदानन्द स्वरूप हरि माधव आनन्द घन को प्रणाम करता हूँ, जिसकी प्रसाद (कृपा दृष्टि) से मैं संसार रूपी भवसागर के आवागमन से पार हुआ हूँ ॥ १ ॥

ॐ श्री गुरू गीता की ज्ञानमाला के मंत्र का सदा शिव ऋषि हैं, नाना प्रकार के मूल श्लोक-छन्दों का रहस्य अनुवाद सरल भाषा में कहा गया है, श्री गुरू देवता है। मेरी चार प्रकार की सिद्धि के लिए श्री गुरू की प्रीति के लिए जप (स्मरण) ही विनियोग है।

उपक्रम का उपोद्घात

एक समय शौनकादि अट्ठासी हजार ऋषिगण ने मिलकर मानव कल्याण यज्ञ (सत्संग) का नैमिषारण्य तीर्थ में आयोजन किया, उस ज्ञान यज्ञ में श्रीवेद व्यास पाराशरी के परम शिष्य ज्ञान-गुण सागर तत्ववेता श्री सूतजी महाराज पधारे तब सबने अपने-अपने आसन से उठ कर सादर सप्रेम सत्कार युक्त साष्टांग यथावत प्रणाम

करके उपयुक्त आसन दिया, तब तत्वज्ञ श्रीसूत 'अच्युत' सभाध्यक्ष का आसन ग्रहण करके विराजमान हुए। उस समय अनेक शास्त्र-पुराणोक्त रहस्यमय कर्म, उपासना ज्ञान जन्य विविध कल्याणकारी साधनों के विवेचन को कथा रूपान्तरों में कहे गए। तत्समय श्री शौनक ऋषि ने प्रार्थना करके गूढ़ तत्व को जानने की इच्छा करते हुए प्रश्न किया और श्रीसूतजी महाराज ने उन्हें जो तत्वज्ञान शिव-पार्वती के संवाद रूप में कहा गया उसी मूल गुरू गीता को मैं गुरू भक्ति प्राप्ति के लिए सरल भाषा में भावार्थ अनुवाद रूप से कहता हूँ।

अथ प्रथम गुरू ज्ञान गजरा अङ्ग १

(गुरू मर्यादा, गुरू-पद का महात्म्य)

श्री शौनक ऋषि बोले-सर्वग्रन्थमय भागवत स्वरूप गुरू स्वरूप सब गुरू ज्ञान को जानने वालों में श्रेष्ठ और सब पुराणों को कथन करने एवं जानने वाले है सूतजी! हम सब धर्म सम्पादन के मूल रूप से विशेष गुरू महात्म्य को सुनने की इच्छा करते हैं॥ १ ॥

आचार्यवान (गुरू मुखी) महापुरूष ही परमात्मा को जानता है, इसलिए हे प्रभो! सर्व पुरूषार्थमय गुरू के महात्म्य को कहो॥ २ ॥

आपके श्रीमुख से जिस प्रकार निर्णय पूर्वक हम सुनेगे, उसी प्रकार गुरू की उपासना करेगे॥ ३ ॥

श्री सूत जी महाराज बोले-हे ऋषिजन! आपने समस्त लोकों के हित करने को सुन्दर प्रश्न किया है, अतः आप कुल के भूषण रूप पवित्र एवं धन्य रूप हो ॥ ४ ॥

जिस श्रद्धालु प्राणी का गुरू साक्षात् परम शुभ देवता है, उन्हीं को लोक में गुरू महात्म्य की कथा सदा प्रिय हो ॥ ५ ॥

जो मानव गुरू की उपासना करता है, वह कृतार्थ रूप धन्यभाग है, उसने नरदेह धारण करके जीवन को सार्थक (सफल) बनाया हैं और अपने कुल का भी उद्धार कर लिया है॥ ६ ॥

जिनकी परमप्रभु परमात्मादेव में पराभक्ति है अर्थात् जिस प्रकार

परमात्मा में भक्ति है, उसी प्रकार गुरू में भी है, उन महात्माओं को हृदय में कहे गये गूढ़ अर्थ के भावों का प्रकाश होता है॥ ७॥

जैसे आपने आज पूछा है उसी प्रकार श्री कैलाश के रमणीक शिखर पर विराजिता भक्ति साधन को जानने के लिए श्री शङ्कर से पार्वती भक्ति पूर्वक प्रणाम करके पूछने लगी॥ ८॥

श्री पार्वती (गिरजा) बोली

हे देव! देवताओं के ईश्वर, पर से पर, भौतिक विश्व के गुरू रूप सदाशिव महादेव! आप मुझे गुरूदीक्षा (नाम दान) देने की कृपा करें॥ ९॥

हे जगत के स्वामी! किस मार्ग से जीव ब्रह्मतत्व को प्राप्त होता है, सो हे देव! कृपा करके वह साधना मार्ग मुझे श्रवण कराओ, तदर्थ आपके चरणकमल को प्रणाम करती हूँ॥ १०॥

श्री ईश्वर (शिव) बोले।

हे देवी! तूँ मेरा ही रूप हैं, तेरी जिज्ञासा के कारण परमतत्व गुरू महत्व मन्त्रदान कहता हूँ, जैसा प्रश्न तुमने लोकोपकार करने वाला पूछा है, वैसा पहिले किसी ने भी नहीं पूछा॥ ११॥

जो गुरू दीक्षा को महत्व तीनों लोकों में दुर्लभ हैं, उसको जैसे हैं वैसे कहता हूँ सो सुनो॥ १२॥

हे गिरिजा! इस संसार में गुरू तत्व के सिवाय अन्य कुछ भी सत्य नहीं है, यह सत्य हैं, सर्वदा सत्य है। मंत्र, यंत्र, तंत्रादि प्रभृत्य विद्या, स्मृति, उच्चाटन इत्यादि षट्कर्म और शैष, शाक्त्य, आगम (वेद) निगम (शास्त्र) आदि सब विभिन्न मत मतान्तर बहुत हैं, जो भ्रांत चित्त वाले सभी जीवों को भ्रम में डालकर फँसाने वाले हैं॥ १३-१४॥

वेद, शास्त्र, पुराण गुरू की कामना से ही अनुभूति पूर्ण हुए हैं, इस संसार में तत्व-स्वरूप को जानने वाला साधक स्वयं साक्षात गुरूमय हो जाता है॥ १५॥

यथा-सादुल सतगुरू सन्त को, नमे सो पूरा नेक।
औ नमे गुरू एक को, उनको नमे अनेक॥

गुरू तत्व को नहीं समझने वाले मूर्ख लोग यज्ञ, दान, तप, तीर्थ, व्रत और अन्य धर्मों के परायण होकर प्रभूत पुण्य प्राप्त करना चाहते हैं॥ १६॥

हे वराननने! आत्मा से अन्य भौतिकवाद का कोई गुरू-तत्व को जानने वाला नहीं है। बुद्धिमानों को सदैव आत्मलाभ के लिए गुरू द्वारा प्रयत्न करना चाहिये॥ १७॥

जिस सतगुरू की कृपा से देही (जीव) ब्रह्ममय हो जाता हैं,

उसके लिए मैं कहता हूँ-सब पापों से मुक्त हुआ आत्मा श्री गुरू के चरणों के सेवन से निश्चल पद पाता है॥ १८ ॥

श्री सतगुरू की अनन्य चिंतवन (दृढ़-भाव) द्वारा परमपद अति सुलभ हो जाता है, इसलिए सर्व प्रयत्न (उपायों) से सत्य रूप गुरू की आराधना करो॥ १९ ॥

श्री गुरू मुख में स्थित सद्‌विद्या गुरू की अनन्य भक्ति से प्राप्त होती है, तीनों लोकों में सतगुरू के सिवाय देवादि असुर और पन्नग (नाग) आदि कोई भी सत्य वक्ता नहीं हुआ है॥ २० ॥

सतगुरू का श्रेष्ठ पद देवताओं को भी दुर्लभ है, हा हा हू हू

गायक गण गान्धर्व सेवक तथा स्वयं गान्धर्वों से गुरू का पूजन किया जाता है॥ २१॥

विश्व के सब चैतन्य स्वरूपों में कोई भी गुरू समान परम तत्व नहीं है। इसलिए आसन, शय्या, वस्त्र, वाहन, फल, पुष्प, भूषणादि लभ्य वस्तु सतगुरू के संतोष निमित्त साधक (शिष्य) को भेंट धरणी चाहिए अर्थात् गुरू दर्शनार्थ खाली हाथों नहीं जाना चाहिये॥ २२॥

सामर्थ्य शक्ति के अनुसार सर्व उपायों से गुरू की आराधना करनी चाहिए अर्थात् अपने जीवत्व के स्वाभिमान को भी गुरू चरण में अर्पण कर देना चाहिए॥ २३॥

सच्चे हार्दिक भाव से, कर्म (शरीर), मन वाणी से सत गुरू की आराधना करना चाहिए, लज्जा रहित गुरू के समीप लम्बे दण्ड के समान (साष्टांग) प्रणाम करना चाहिए ॥ २४ ॥

प्रणाम के साष्टांग कथन-

मन वाणी शिर जानु युग, नैन पाँव ललाट।
कर साष्टांग प्रणाम वर, रामप्रकाश सुख घाट ॥

स्थूल शरीर जो अन्त में कीड़े, पशु-भिष्टा, पृथ्वी दाह में भस्म होने वाला और दुर्गन्धमय मलमूत्र वाला नाशवान हैं, ऐसे शरीर, जड़, धन और ऐश्वर्य को सत गुरू शरण में अर्पण कर देना चाहिए ॥ २५ ॥

हे वराननने! कफ, लोहू, खाल (चर्म), मांस वाले शरीर रूप संसार वृक्ष पर चढ़ा हुआ प्राणी सतगुरू की भक्ति बिना नरक रूपी समुद्र (भवसिंधु) में गिरता हैं ॥ २६ ॥

हे प्रिय! श्री गुरू के दोनों चरण जिस दिशा में विराजते हैं अर्थात् जिस दिशोपदिशा धाम में गुरूदेव विराजते हैं उस दिशा को रात दिन (प्रातः सायं सन्ध्या काल में) भक्तिपूर्वक नमस्कार करना चाहिए ॥ २७ ॥

सतगुरू की भक्ति से ज्ञान, विज्ञान और मोक्ष प्राप्त होता है, इसलिए गुरू के समान अन्य कोई भी नहीं है, गुरू मार्ग के

अवलम्बन करने वाले को गुरू ही साध्य देव है॥ २८॥

देवता, किन्नर, गंधर्व, पितृ, यक्ष, चारण और मुनि भी गुरू सुश्रुषा (सेवा) की विधि नहीं जानते॥ २९॥

गुरूभक्ति बिना प्राणी मद, अहङ्कार और गर्व से तप, विद्या एवं बल के अधिक होने से घटियंत्र के समान पुनः पुनः संसार रूपी गड्ढे में गिरता है॥ ३०॥

गुरू भक्ति से विमुख होने पर देवता, गान्धर्व, पितृ, यक्ष, किन्नर, ऋषि मुनि और सब सिद्ध गण भी नरक गामी (मुक्त नहीं) हुए है॥ ३१॥

मानव-संत-साधक मात्र को जबतक देह रहे उस कल्पांत समय तक गुरू का स्मरण करना चाहिये, अत: अपने आपको स्वच्छन्द होने की इच्छा हो तो सदैव गुरू सेवा में अनुरक्त रहें और मर्यादा का लोप न करें॥ ३२॥

गुरू ज्ञान गीता के प्रथम गजरा का महात्म्य।

इस गुरू ज्ञान गीता पर जिस मानव की स्वभाविक ही सात्विक श्रद्धा है, वह साधक पवित्र हैं, जहाँ वह गुरू-भक्त रहता है, उस क्षेत्र पीठ में सभी देवगण निवास करते है॥ ३३॥

अथ द्वितीय गुरू ज्ञान गजरा अङ्ग २

(सर्गुण गुरू चरणोदक महिमा)

श्री शिवजी बोले- हे वरानने! बुद्धिमान शिष्यों को गुरू के प्रति अहंकार से नहीं बोलना चाहिए, गुरू से कभी झूंठ नहीं बोलना चाहिए और बराबर के आसन पर या पाँव फैलाकर भी नहीं बैठना चाहिए॥ १ ॥

संसार में शिष्य के धन को हरण करने वाले बहुत से गुरू हैं, परन्तु शिष्य के अज्ञान तिमिर रूप अथाह दुःख को हरने वाले उस एक ही उत्तम सतगुरू को मै दुर्लभ मानता हूँ॥ २ ॥

भवसागर से पार करने वाले मुख्य मंत्र की ब्रह्मा, देव, मुनि, सिद्ध, चारण और गान्धर्व प्रभृत्य से पूजित, मंत्र को, दारिद्र दुःख, भय और शोक के नाश करने वाले मंत्र को, अभय एवं वरद मंत्रराज गुरूदेव की मैं वंदना करता हूँ॥ ३॥

गुरूदेव के चरणोदक को पीकर जल को शीश पर धारण करने मात्र से मनुष्य सब (तीन करोड़ तीर्थों में प्रमुख अड़सठ) तीर्थों के स्नान का फल प्राप्त कर लेता है॥ ४॥

हे प्रिय! गुरू का चरणोदक (चरणामृत) समस्त पाप रूपी कीचड़ को सुखाने वाला, ज्ञान रूपी तेज का प्रकाश करने वाला

और सम्यक् प्रकार से संसार रूपी भव समुद्र से पार करने वाला है॥ ५॥

सातों सागर पर्यन्त समस्त तीर्थों के स्नान, दान, ध्यान, पूजन प्रभृत्य से प्राप्त होने वाले प्रभूत पुण्यफल तो गुरू के चरणोदक के हजारवें अंश की भी बराबरी नहीं कर सकता, इसलिए सतगुरू का चरणोदक सर्वं दुर्लभत्तर पुण्य है॥ ६॥

साधक को ज्ञान विज्ञान की सर्वसिद्धि के लिए अज्ञान रूपी भवदुःख के हरने वाले एवं जन्म कर्म के निवारण करने वाले सतगुरू के चरणामृत को लेना चाहिए॥ ७॥

हे वरानने! सतगुरू मूर्त्ति का सदा ध्यान करते हुए गुरू स्त्रोत पाठ को नित्य जप करें और गुरू के उच्छिष्ट बचे हुए प्रसाद का भोजन करके चरणोदक को पीकर साधक कल्याण मार्ग को पाता है॥ ८॥

सतगुरू निश्चित ही काशी क्षेत्र का निवास, गंगाजी का चरणोदक प्रदाता, साक्षात् विश्वेश्वर और अभयदाता स्वयं ब्रह्मरूप है॥ ९॥

सतगुरू मूर्त्ति ही अक्षयवट, गया और तीर्थराज पुष्कर, प्रयाग प्रभृत्य हैं, अतः अपने शिर को चरणों से अंकित करके गुरू श्री को प्रणाम करता हूँ॥ १०॥

निराकार ब्रह्म गुरू के मुख में स्थित है, गुरू-प्रसाद से वह प्राप्त होता है। जिस प्रकार व्यभिचारिणी स्त्री उपपति का ध्यान करती हैं, उसी प्रकार एकान्त चित्त से प्रतिक्षण गुरू-मूर्त्ति का ध्यान करना चाहिए॥ ११ ॥

सतगुरू ही सर्व जगत रूप हैं और ब्रह्मा, विष्णु, शिव का आत्मा भी गुरू ही है अर्थात् गुरू से श्रेष्ठ और कोई नहीं है, इसलिए भली प्रकार से गुरू का पूजन करना चाहिए॥ १२ ॥

अपना वर्ण, अपना आश्रम और अपनी पुष्टि को बढ़ाने वाली कीर्त्ति के सिवा सभी त्याज्य है अर्थात् गुरू के सिवाय अन्य नाशवान्

लौकिकता की भावना नहीं करनी चाहिए॥ १३॥

जिस सतगुरू ने इस सम्पूर्ण दृश्य जगत को धारण कर रखा हैं और जिस गुरू के चरणों की प्रसाद से आत्मज्ञान स्वयं उत्पन्न होकर भव बाधा दूर करता है, उसी श्री परम उत्तम गुरू को प्रणाम करता हूँ॥ १४॥

जिस सतगुरू ने ज्ञान रूपी अञ्जन से युक्ति सलाई द्वारा बुद्धिरूप चक्षुओं का अज्ञान अंधकार दूर करके अविद्या तिमिर से अंधी हुई वृत्तियों का विकाश किया हैं, उसी श्री उत्तम गुरू को प्रणाम है॥ १५॥

जो अखण्ड मण्डलाकार रूप विश्व (वैराट) में चराचर को

व्याप्त करने वाला ब्रह्मतत्व हैं, उस चैतन्यपद को दिखाने वाले ज्ञानी गुरू को प्रणाम करता हूँ॥ १६॥

प्राणी मात्र को भोग और मोक्ष देकर लोक परलोक गति देने वाले, श्री तत्वमाला से शोभायमान परम ज्ञान शक्ति पर आरूढ़ उस श्री उत्तम गुरू को प्रणाम करता हूँ॥ १७॥

अपने आत्मज्ञान को प्रदान करके अनेक जन्मों से प्राप्त हुए कर्मरूप बन्धन को जलाने वाले उस श्री वरिष्ठ गुरू को प्रणाम करता हूँ॥ १८॥

सभी प्रकार के उपासना ध्यानों में उत्तम ध्यान गुरू मूर्त्ति का

है, गुरूचरण की पूजा प्रमुख पूजा है। सभी मंत्रों से श्रेष्ठ गुरू-वाक्य का शब्द ही मूल मंत्र है और सतगुरू की कृपा ही मोक्ष का कारण है, अतिरिक्त अन्य कोई साधन नहीं है॥ १९ ॥

ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर प्रभृत्य देव गुरू की कृपा के प्रसाद से ही प्रमुख रूप से बड़े हुए है और केवल गुरू की सेवा करने से एवं गुरू के प्रसाद से उन्हें महासामर्थ्य प्राप्त हुआ है॥ २० ॥

हे प्रिय! शिव के उपदेश से गुरू से कोई भी अधिक नहीं है, शिव (ज्ञान) के उपदेश से गुरूतत्व से अधिक कोई नहीं है। शिव के उपदेश से गुरू से अधिक विश्व में कोई नहीं है अर्थात् शिव के

उपदेश से तीनों लोक में भी तीन काल में कोई भी गुरू पद से अधिक नहीं है॥ २१ ॥

हे पार्वती! मेंरे उपदेश से यह सतगुरू ही शिव है, मेंरे उपदेश से यह गुरू (ज्ञान) ही शिव (कल्याण) है, मेंरे उपदेश से यह गुरू (ब्रह्म) ही शिव (शुभ) है, मेंरे उपदेश से यह गुरू (ज्ञानदाता) ही शिव (वेद) है॥ २२ ॥

मुनिगण से, सर्पों से अथवा देवताओं द्वारा शाप दिया गया हो और यदि काल (समय) एवं मृत्यु (यम) के भय से भी गुरू ही रक्षा करके अभय बना देते है॥ २३ ॥

सभी देव, गन्धर्व, यक्षादि सामर्थ्य रहित है, ऋषि-मुनि भी शक्ति सामर्थ्य से रहित है क्यों कि गुरू का शाप लगने से सबका क्षय हो जाता है, इसमें संशय नहीं हैं, अर्थात् सतगुरू ही सामर्थ्य है जो अपने कृपा कटाक्ष द्वारा आनन्दामृत वर्षिणी ज्ञानवाणी के प्रसाद से अभय कर देते है॥ २४॥

साधक अपने जीवन में श्रुति (वेद) स्मृति (कर्मो पासन विधि) को नहीं जानकर भी जो केवल एकमात्र सतगुरू के सेवक रूप उनकी शरण में पड़े वही वास्तविक वैष्णव सन्यासी है, अन्यथा केवल बानाधारी भेष वंचक है॥ २५॥

सतगुरू की कृपामृत वाणी से आत्मा को आनन्द प्राप्त होता है और इस गुरू मार्ग की साधना से ही अन्तर्ज्ञान (अनुभव) उदय होता है॥ २६ ॥

जैसे कीट भ्रमर का ध्यान करते हुए स्वयं उसी रूप को पाता है, उसी प्रकार सर्वमय होकर जहाँ कहीं स्वयं स्थित हो वहाँ पर एकांत निश्चल रूप से ध्येरूप गुरूतत्व का ध्यान धारण करें ॥ २७ ॥

इसी प्रकार उपयुक्त पिण्ड (सर्गुण) रूप में, पद (निर्गुण) में तथा रूप (प्रकृति जन्य विश्व) में सर्वत्र उत्तम गुरू तत्व का ध्यान (श्रवण-मनन, पठन-पाठन) करके साधक स्वयं ब्रह्ममय चेतन

हो जाता है अर्थात् मुक्ति प्राप्त कर लेता है, इसमें किंचित्मात्र भी संशय नहीं है॥ २८॥

श्री शिवा (पार्वती) बोली।

हे सदाशिव! पिण्ड क्या है? पद किसको कहते है? हे महादेव! रूप क्या है और रूप से अतीत को भी कथन करके दृढ़ता दीजिये॥ २९॥

श्री शंकर (शिव) बोले।

हे शिवा! पिण्ड कुण्डलिनी शक्ति (स्थूल) साधना है, पद हंस (जीवात्मा) रूप सूक्ष्म साधना है, रूप बिंदु रूपा साक्षी (ँ) तथा रूप से अतीत निरञ्जन (शिव) ब्रह्म तत्व ही गुरू है॥ ३०॥

(यह शब्द रचना विसर्ग संधि से हुई है, जो विसर्ग के पहले अ, आ को छोड़ कर कोई स्वर हो और आगे कोई घोप वर्ण हो तो विसर्ग के स्थान पर 'र' हो जाता है, के नियम से यहाँ निः=नहीं, अञ्जन=माया अर्थात् माया रहित ब्रह्मरूप कल्याण तत्व कहा गया है, किन्तु आजकल कई सम्प्रदाय मतवादी निरञ्जन शब्द का अर्थ 'काल' बताते है सो सर्वथा कल्पित (झूंठ) है ॥)

हे शिवा! सब श्रुतियों में शिरोरत्न से शोभायमान कीर्त्तिकर चरणकमल वाले और वेदान्त रूपी कमल को सूर्य रूप उस प्रभुत्व सम्पन्न श्री उत्तम गुरु को मैं प्रणाम करता हूँ ॥ ३१ ॥

जिसके स्मरण मात्र से आत्मज्ञान स्वयं उदय होता है, ऐसे सदा ही सर्व सम्पत्तिरूप उस श्री गुरू को प्रणाम करता हूँ ॥ ३२ ॥

-गुरू ज्ञान गीता के द्वितीय गजरा का महात्म्य-

इस गुरू गीता के जप पठन मात्र से ही सब प्राणी सर्व पाप निवृत्ति एवं सर्व सिद्धि रूप भुक्ति-लौकिक और मुक्ति-परलोक के परमलाभ को पाते है॥ ३३ ॥

अथ तृतीय गुरू-ज्ञान गजरा अङ्ग ३

(गुरू भक्त की गति एवं गुरू महिमा)

श्री शिव बोले-

हे महादेवी! सर्व आनन्द देनेवाले, सर्व सुख के देने वाले अर्थात् भुक्ति और मुक्ति के देने वाले परमोत्तम ध्यान को कहता हूं सो सुनो॥ १ ॥

श्रीमान् परंब्रह्म स्वरूप गुरू को मैं प्रणाम करता हूं, श्रीमान् परंब्रह्म रूप गुरू को मै भजता हूं, श्रीमान् परंब्रह्म रूप गुरू को मैं कथन करता हूं, श्रीमान् परंब्रह्म रूप गुरू को मैं स्मरण करता हूं ॥ २ ॥

शाक्त (शक्ति का मानने वाला), शैव (शिव को मानने वाला), गाणपत्य (गणेश को मानने वाला), वैष्णव (विष्णु की उपासना करने वाला), सौर (सूर्य की उपासना करने वाला) प्रभृत्य पांचों देवताओं के उपासकों को मूल रूप के बिना भ्रांति से सतगुरू का जप करने वाले को सिद्धि देने वाला गुरू ही परम देवता है। हे प्रिये! यह तीनों काल में सत्य है, इस में कुछ भी संशय नहीं है॥ ३ ॥

संसार रूप मलार्णव (पापजन्य विपत्ति) को नाश करने के लिए और परमानन्द सिद्धि के लिए तत्वज्ञ पुरूष सदैव गुरू गीता रूप अध्यात्म महात्म्य के जल में स्नान (पठन) करता है॥ ४॥

सदैव नित्यरूप सतब्रह्म को जानने वाला स्वयं साक्षी ही साक्षात् गुरू के समान है, उस तत्वज्ञ के लिए सब स्थान पवित्र है, इसमें कोई संशय नहीं है॥ ५॥

पूर्व सभी महापुरूष गुरू को सन्तुष्ट करने से ही मुक्त हुए है, उसमें संशय नहीं है। भोग, मोक्ष और ऐश्वर्य सभी सदाकाल से गुरू के हाथ में बर्तता है॥ ६॥

हे देवी! कल्प से लेकर करोड़ों जन्मों तक किये हुए यज्ञ, तप, व्रत और क्रिया यह सब गुरू के सन्तोष मात्र से सफल होते है॥ ७॥

गुरू माला गुरू तिलक है, गुरू तीर्थ गुरू धाम।
हरिराम सतगुरू बिना, सरे न एको काम॥

जो मनुष्य विद्या और धन के मद से गुरू की सेवा नहीं करते, वे मंद भाग्य वाले हैं। हे देवी! मैं सत्य सत्य कहता हूं, अतः सदैव सभी प्रकार से गुरू सेवा में तत्पर रहना चाहिए॥ ८॥

हे वरानने! मैं सत्य सत्य कहता हूं, गुरू ही प्रमुख देव हैं, गुरू ही धर्म है, गुरू ही सत्य निष्ठा हैं, गुरू ही परम तप है अर्थात् गुरू

से विशेष कोई नहीं है॥ ९॥

हे प्रिये! गुरू भक्ति सर्व दुर्लभ है, जिसके हृदय में गुरू भक्ति उदय है उसकी माता धन्य है, उसका पिता धन्य है, उस का वंश तथा कुल भी धन्य है और जहां वह निवास करता है वह देश, ग्राम (राष्ट्र भूमि) ही धन्य है॥ १०॥

शरीर, इन्द्रिय, प्राण, धन, स्वजन, बांधव, माता, पिता, कुल और देव अर्थात् सर्व गुरू ही का ऐश्वर्य होने से पूर्णतया गुरू भक्ति को उदारचित्त से धारण करना चाहिए॥ ११॥

ब्रह्मा, विष्णु, शङ्कर प्रभृत्य देवता, ऋषि, पितृ, किन्नर, सिद्ध,

यक्ष, गान्धर्व और सर्पादि अन्य मुनि लोग भी गुरू सेवा करते है॥ १२॥

क्यों कि गुरू सेवा परमतीर्थ हैं, अन्य तीर्थ निरर्थक प्रायः युगान्तरों से फलते है, किन्तु हे देवेश्वरी! सत के चरणकमल सर्वतीर्थमय मूल कल्याण खानि है॥ १३॥

हे देवी! सत गुरू के चरण कमल के अंगूठे में सब तीर्थां का फल वर्तित होता है। हे प्रिय मैनें यह गुप्त रहस्य मय गुरू तत्व किसी से नहीं कहा है॥ १४॥

हे देवी! इस गुरू तत्व को प्रत्येक से यत्र तत्र सर्वत्र नहीं कहना चाहिए, तेरी गुरू भक्ति से प्रसन्न होकर मैंने तुझ से कहा हैं सो

प्रयत्न पूर्वक उपायों से गुप्त रखने योग्य है जिससे तूँ आत्मत्व परम ज्ञान शक्ति को प्राप्त होगी॥ १५॥

अविद्या ग्रन्थि के भेदन करने वाले सच्चिदानंद, स्वयं व्यापक परमात्मा रूप ब्रह्मनिष्ठ एवं ब्रह्मवेत्ता श्री स्वामी सतगुरू को प्रणाम करता हूँ॥ १६॥

ब्रह्मवेता अ है ब्रह्म वित, ताकी वाणी वेद।
भाषा अथवा संस्कृत, करत भेद भ्रम छेद॥

परमतत्व रूप सतगुरू का ध्यान करने से स्वतः ही आत्मानुभूति का अनुभव ज्ञान उत्पन्न होता है, इसलिए सात्विक कृतज्ञभाव

साधक को सदैव ऐसी उदार भावना का संकल्प करना चाहिये कि मैं गुरू के उपदेश से स्वयं मुक्त हुआ हूँ ॥ १७ ॥

जब गुरू के दिखलाये हुए मार्ग से मन शुद्ध कर लिया जाता हैं, तब जो कुछ दृष्टि का विषय है, उस सब दृश्य मात्र अनित्य का तोड़कर आत्म साक्षात्कार होता हैं ॥ १८ ॥

सम्पूर्णा ज्ञेय (दृश्य) अनित्य (नाशवान) है और ज्ञान स्वयं गुरू स्वरूप नित्य है, ज्ञान और ज्ञेय को समान (समदृष्टि पूर्ण अद्वैत निष्ठा) करले तो मायिक द्वैत रञ्चमात्र भी नहीं रह सकता है ॥ १९ ॥

ऐसे परम गुप्त गुरू महात्म्य के गोपनीय तत्व को सुनकर जो गुरू को मानव (देहधारी) जानकर उनकी निंदा (ईर्ष्यामय द्वेष) करता है, वह जब तक चन्द्र और सूर्य है तब तक घोर नरक में पड़ता है॥ २० ॥

श्री गुरू को अरे तरे आदि तुच्छ शब्दोच्चारण से सम्बोधन करने से और गुरू को वाद-विवाद से जीतने की इच्छा रखने वाला तर्क प्रेमी निर्जल बन में राक्षस होता है और नारकीय यातनाऐं पाता है॥ २१ ॥

जिस श्री गुरू को देखने (दर्शन) से ही उनकी कृपा (प्रसाद) के संग से रहित, अकेला, स्पृहा (इच्छा) रहित और शान्त पद

को प्राप्त हो जाता है॥ २२॥

श्री सत गुरू के ध्यान से स्वयं साधक शुद्ध ब्रह्ममय हो जाता है, जिससे परात्पर अन्य कोई श्रेष्ठ पद नहीं, जो सर्वाधार किसी भी मायिक आस्था के आधार से हीन है॥ २३॥

गुरू भक्त (साधक) को अपने प्रारब्धकर्म से प्राप्त हुआ अथवा न प्राप्त हुआ, थोड़ा या बहुत जो भी स्थिति हो, उसे सन्तुष्ट मनसे निष्काम होकर भोगना चाहिये॥ २४॥

देही (स्थूल शरीरधारी) साधक गुरूमंत्र का स्मरण करके सर्वज्ञपद को प्राप्त करके सर्वमय हो जाता है, तदनंतर वह जहां तहां नित्य आनन्द में सदा शान्त स्वरूप से रमण करता है॥ २५॥

जहां जाऊँ वहां जगत में, महा दुःख को मूल।
हरिराम गुरू कृपा से, रहत सदा फल फूल॥ हरिसागर

गुरूभक्त जहां निवास करता हैं, वह भी पुण्य का पात्र होता हैं, हे देवी! मैनें यह तुझ से जीवन्मुक्त ज्ञानी के लक्षण कहे हैं॥ २६॥

फुरे न कोई फोरणा, आस भई गलतान।
हरिराम यूँ जाणिये, जीवन्मुक्त प्रमान॥

हे देवी! मैंने तुझे गुरूमार्ग से गुरू दीक्षा (उपदेश) दिखलाया है और गुरू-भक्ति तथा गुरू-ध्यान तत्व भी स्पष्टतः मूल रूप से कह सुनाया है॥ २७॥

हे देवी! इस गुरू-भक्ति मय दीक्षा से जो कार्य होता है वह मैं

कहता हूं, वह लोक का उपकार करने वाला है, किंतु इस गुरू महत्व को प्राकृतिक या लौकिक नहीं समझना चाहिये, अपितु अक्षुण अलौकिक पराभक्ति का मूल परमज्ञान है॥ २८॥

गुरू भक्ति में अज्ञानी पुरूष लौकिक भावन करके गुरू में भेद दृष्टि देखकर संसार समुद्र में गिरते है। ज्ञानी सर्व की भावना करता है, कर्म और विपरीत कर्म शान्त हो जाते है॥ २९॥

हे आनन्दस्वरूप, आनन्द करने वाले, प्रसन्न, ज्ञान-स्वरूप, निजबोधरूप, योगियों के राजा, पूज्य संसार रूपी रोग के वैद्य श्रीमान् बोद्धयुक्त सतगुरू को मैं नित्य प्रणाम करता हूँ॥ ३०॥

गुरू मूर्त्ति का नित्य स्मरण करके गुरू का नाम सदा जप करते

रहना चाहिये। सतगुरू की आज्ञा पालन करना चाहिये, गुरू के सिवाय अन्य किसी इष्ट की भावना न करें॥ ३१॥

सर्व प्रकार से जो छल त्याग कर निष्कपट श्रद्धापूर्वक महामुक्त के अनुसार सदा बरतता है और जो सर्व प्रयत्न से सतगुरू का भक्तिभाव से पूजन करता है, उस साधक से गुरू सन्तुष्ट होते हैं तथा अभयपद प्रदान करते है॥ ३२॥

-गुरू ज्ञान गीता के तृतीय गजरा का महात्म्य-

इस गुरू ज्ञान गीता के जपने से अनन्त फल की प्राप्ति होती है तथा किसी कामना को लेकर भी यदि कोई जप-पठन करे तो उस सर्व कामना के फल को प्राप्त करेगा॥ ३३॥

अथ चतुर्थ गुरू-ज्ञान गजरा अङ्ग ४

(अद्वय गुरू शब्द का गोपनीय अध्यात्म भेद)

श्री शङ्कर (शिव) बोले-

हे शिवा! जिस प्रकार समुद्र का जल, दूध में दूध, जल में जल है, भिन्न २ कुम्भों में जैसे आकाश है, इसी प्रकार आत्मा में परमात्मा, एक रस, अविगत, अविनाशी रूप गुरू-तत्व व्यापक होकर समाया हुआ है॥ १ ॥

ज्ञानी का जीवात्मा परब्रह्म, स्वयंस्वरूप गुरू तत्व में लय हो जाता है। ज्ञानी जहां तहां एक रूप होकर रात-दिन सर्वत्र रमण करता है॥ २ ॥

गु अक्षर अन्धकार रूप प्रकृतिमय गुणात्मक प्रतिभा का द्योतक है और रू अक्षर अज्ञानावर्ण के अंधकार को दूर करने वाला ज्ञान रूप प्रकाश का द्योतक है अर्थात् माया मय अंधकार (जड़ता) के विरोधी प्रकाश (चैतन्य) भाव होने से गुरू शब्द की सार्थकता कहीं है ॥ ३ ॥

जिन के दोनों अक्षर (शब्दमय) चरणकमल साधक के द्वंद रूपी ताप-पाप का निवारण करने में सक्षम हैं और संसार रूपी अथाह समुद्र से पार करने वाले हैं, ऐसे चैतन्य (ज्ञानी) श्री गुरू को मैं प्रणाम करता हूँ ॥ ४ ॥

सब देहधारियों में गूढ़ विद्या से ज्ञान होना सम्भव हैं। जो तत्व

स्वयं प्रकाश से उदय होता है, उस ज्ञान को गुरू शब्द से सम्बोधन किया गया है॥ ५ ॥

जो गुकार गुणों से अतीत (गुप्त) है, रूकार रूप से रहित है अर्थात् जो गुणातीत और रूपातीत स्वयं चेतन ब्रह्मतत्व है, वहीं गुरू शब्द से आध्यात्मीय प्रकार से कहा गया है॥ ६ ॥

हे देवी! श्रुति और वेदांत वाक्यों में 'गुरू' यह दो अक्षरों का शब्द मंत्रराज है अर्थात् गुरू साक्षात् परमपद स्वरूप है॥ ७ ॥

नोट-प्रचलित कल्याणकारी शब्दों में "राम, सत, ओम, सोहं" प्रभृत्य सभी प्रमुखरूप से 'गुरू' शब्द के पर्यायवाची (सहायी) शब्द हैं।

कुण्डलिया-नामाक्षर चौगन करो, पंचयुत दुगुन मिलाय।

वसु अंक के भाग पर, शेष राम रह जाय॥
शेष राम रह जाय, भेद युग अक्षर धारो।
गुणन रूप ते पर गुरू, सोहं सत उचारो॥
ॐ नाम सतगुरू सही, अविगत अचल निरक्षर।
रामप्रकाश गुरू तत्व लय, नमो वरनहिं नामाक्षर॥

गुकार अंधकार (जीव) है, रूकार तेज (ब्रह्म) कहलाता हैं अर्थात् अज्ञान को ग्रास करने वाला ब्रह्म ही गुरू स्वयं है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है॥ ८॥

गुकार प्रथम वर्ण माया प्रभृत्य गुण का भास कराने वाला हैं और दूसरा ब्रह्म रूकार जड़ माया की भ्रांति का नाश करने वाला

होने से गुरू शब्द स्तुत्य है॥ ९ ॥

हे पार्वती! इन्द्रियों का अविषय, अगम्य, रूपनामादि सर्वविकार रहित, शब्द(वाणी)रहित का ब्रह्म(गुरू)का स्वभाव समझें ॥ १० ॥

जिस प्रकार कपूर, कुंकुम आदि के अपने अपने स्वभाव शीतोष्णादि है, इसी प्रकार ब्रह्म का शाश्वता (नित्यता) स्वभाव है॥ ११ ॥

ब्रह्मा से स्तम्ब (घास की अंटी) पर्यन्त परमात्मा के स्वरूप है, स्थावर और जंगम (चराचर) के स्वरूप से जगन्मय गुरू तत्व को मैं प्रणाम करता हूँ॥ १२ ॥

जो सच्चिदानन्द स्वरूप, नित्य, पूर्ण, सर्वभेद से अतीत, आकार

रहित, गुण रहित, वाणी से परे है, ऐसे स्वात्मा में स्थित जगद्गुरू को प्रणाम करता हूँ॥ १३॥

जो पर से भी अत्यन्त पर, ध्येय रूप, नित्य आनंद करने वाले, हृदय-आकाश के मध्य में स्थित प्राणियों का प्रेरक, शुद्ध स्फटिक मणि के समान प्रभाव वाला गुरू है॥ १४॥

जिस प्रकार स्फटिक मणि प्रतिमा रूप से दर्पण में दिखाई पड़ती है इसी प्रकार चेतनाकार आनंदमय है, वह स्वयं मैं गुरू रूप ब्रह्म हूँ॥ १५॥

हे शिवा! चेतन स्वरूप अंगुष्ठ मात्र पुरूष को ध्यान करने से जो भाव स्फुरना है, देख उसे मैं कहता हूँ॥ १६॥

जो हृदय-कमल के कोश मध्य स्थित, चित सिंहासन पर विराजमान है, दिव्यमूर्त्ति, उस सत, चेतन, आनन्द स्वरूप, इष्टफल के देने वाले, सूर्य कला के समान प्रकाश वाले सतगुरू का ध्यान करो॥ १७॥

नित्य, शुद्ध, आभास-रहित, आकार रहित, माया रहित, नित्यबोध स्वरूप, चेतन-आनन्द रूप रमणकर्त्ता (राम), व्यापक (विष्णु) प्रभृत्य विशेषयुक्त ब्रह्मरूप गुरू को मैं प्रणाम करता हूँ॥ १८॥

जिस तत्व के परे कोई नहीं है, श्रुति (वेद) जिस को नेति नेति (न इति, न इति-ऐसा नहीं अर्थात् अपार अचिंत्य अबाणी) कहकर

कथन करते है। मन से वाणी से सदैव उस गुरू की आराधना करनी चाहिये ॥ १९ ॥

ब्रह्मानन्द स्वरूप परमसुख के देने वाले, केवल ज्ञान मूर्त्ति, द्वन्द्व से परे, आकाश के समान, तत्वमसि आदि महावाक्य के लक्ष्य, एक, नित्य, निर्मल, अचल, सदा साक्षी स्वरूप, सर्वभाव-भेद से अतीत, तीनों गुणों से रहित, निरालम्ब, उस निरञ्जन श्री सतगुरू को मैं प्रणाम करता हूँ ॥ २०-२१ ॥

गुरू ब्रह्मा है, गुरू विष्णु है, सतगुरूदेव ही महेश्वर (शिव) है और गुरू ही परंब्रह्म है अर्थात् श्रीसतगुरू स्वयं ही सर्गुण-निर्गुण सर्वस्व मूलभूत है, उस श्री गुरू को मै प्रणाम करता हूँ ॥ २२ ॥

चैतन्य, शाश्वत, शांत, आकाश से पर विभुन्घन, माया रहित, नादबिंदु और कला से अतीत उस श्री गुरू को मैं प्रणाम करता हूं॥ २३॥

जिसने स्थावर, जंगम, चर, अचर, सब जगह व्याप्त कर रक्खा है, उस श्री गुरू को मैं प्रणाम करता हूँ॥ २४॥

श्री गुरू का चरणोदक (वचनामृत) संसार रूपी समुद्र को सुखाने वाला और ज्ञान रूपी सम्पत्ति का प्रकाश करने वाला है, उस श्री गुरू को मैं प्रणाम करता हूं॥ २५॥

गुरू से अधिक तत्व नहीं है, न गुरू से अधिक अन्य तप ही है। गुरू के ज्ञान से परमतत्व का बोध (ज्ञान) होता है, उस श्री गुरू

के लिए मेरा प्रणाम है॥ २६ ॥

मेरा नाथ तीनों जगत (लोक) का नाथ है, मेरा गुरू तीनों भुवन का गुरू है, मेरी आत्मा सब प्राणियों की आत्मा है, उस श्री गुरू को मैं प्रणाम करता हूँ॥ २७॥

गुरू आदि है, गुरू अनादि है, गुरू परमदेव है, गुरू के समान और कोई मंत्र नहीं है, उस श्री गुरू को मैं प्रणाम करता हूँ॥ २८॥

हे पार्वती! मेरे द्वारा कही गई गुरू ज्ञान गीता के समान कोई उत्तम धर्म ग्रन्थ नहीं है और गुरू से भिन्न अन्य कोई परम तत्व नहीं है, यह सत्य हैं सत्य अर्थात् त्रिकाल सत्य है॥ २९॥

इस गुरू गीता को जो साधक भक्ति भाव से पढ़े अथवा सुने

या हाथ से लिखकर दान तथा दक्षिणा सहित देवे तो अक्षय पुण्य की प्राप्ति होती है॥ ३०॥

हे देवी! शुद्ध तत्वरूप यह गुरू-तत्व के महत्व को मैनें तेरे प्रति गीता-रूप में कहा है, अतः संसार रूप व्याधि (भवरोग) को नाश करने के लिए नित्य प्रति इस का पठन जप अवश्य किया करो॥ ३१॥

संसार-सिंधु से पार करने वाले मुख्य मंत्र को ब्रह्मा, मुनि, देव, सनकादि और सिद्धों से पूजित गुरूमंत्र को, दरिद्र, दुःख, भय तथा शोक के नाश करने वाले मंत्र को, महाभय हरने वाले गुरू राज मंत्र की मैं वन्दना करता हूँ॥ ३२॥

उपसंहार

(अधिकारी, गुरू ज्ञान गीता महात्म्य)

शुद्ध गुरू-तत्व (ब्रह्म) की समीपता देनेवाले इस परम गुप्त रहस्य को पापी एवं भ्रांत चित्त वाले से कदापि नहीं कहना चाहिये, अपितु श्रद्धा-भक्ति देखकर अधिकारी को ही यह गुरू गीता का ज्ञान देना चाहिये ॥ १ ॥

हे देवी! यदि यह ज्ञान अधिकारी अनाधिकारी को दे दिया तो उन्हें सिद्धि-सौख्यता कदापि नहीं मिलेगी, अतः हे शिवा! जिसके मन में श्रद्धा हो उसको ही यह गुरू ज्ञान गीता का श्रवण करवाना-

करना चाहिये ॥ २ ॥

हे शिवा! इस गुरू-गीता का एक एक अक्षर मंत्रराज (ॐ-राम-सोहं-गुरू) रूप हैं, अनेक प्रकार के अन्य सभी मंत्र इसके सोलहवें अंश के बराबर भी नहीं है॥ ३ ॥

यह मंत्रराज सब पापों का हरन करने वाला हैं, सब दरिद्रता का नाश करने वाला है और यक्ष, राक्षस, भूतादि के उपद्रव, चोर और व्याघ्र आदि सभी भय अर्थात् दैहिक, दैविक और भौतिक ताप रूप आधि, व्याधि एवं उपाधि जन्य अध्यात्म, अधिदैविक, अधिभौतिक तापों पापों के भय को दूर करने वाला अभयप्रद है॥ ४॥

इस मंत्र राज 'गुरू ज्ञान गीता' के दर्शन करने से ही इसके प्रसाद से गुरू-तत्व के प्रसाद को पाकर अकेला एवं स्पृहा (इच्छा) रहित और मुक्ति रूप शान्ति की प्राप्ति होती है॥ ५ ॥

आसन पर बैठा हुआ, सोता हुआ, जाता हुआ, बैठा हुआ, घोड़े पर चढ़ा हुआ, निद्रावश स्वप्न में या जागता हुआ। ज्ञानी साधक श्री गुरू ज्ञान गीता के मंत्र जप या मन में तत्व रूप का विचार करने से सदा पवित्र हो जाता है, उस पाठक ज्ञानी के दर्शन मात्र से ही फिर जन्म को प्राप्त नहीं होता॥ ६ ॥

गुरू-गीता के पाठक या गुरू-तत्व के साधक द्वारा जो जो कार्य विचारा जाता है, सो सो निश्चय सिद्धि रूप से प्राप्त होता है,

कामना करने वाले को कामधेनु है, कल्पना करने वाले को कल्पवृक्ष के समान फलदाता है॥ ७॥

चिंतवन करने वालों को सर्वमङ्गल को देने वाली चिन्तामणि हैं, मोक्ष की कामना वाला नित्य जप करे तो मोक्ष-सिद्धि को प्राप्त हो॥ ८॥

गुरू कृपा सर्वदा, सर्वत्र रूप से अक्षय और अमोघ फलदाता हैं, अतः तन, मन और वाणी से गुरू प्रसाद प्राप्त करने के हितार्थ सदैव गुरू गीता का पाठ करना चाहिये, जो मुक्ति का फल दान देने वाली हैं॥ ९॥

॥ इति श्री गुरू ज्ञान गीता उपसंहार समाप्त॥

शास्त्रीय नीति गुरू-महत्व

सत गुरू वह है जिसे गुरू परम्परा से आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त हुई है। आध्यात्मिक गुरू का कार्य बड़ा कठिन है, दूसरों के पापों को स्वयं अपने ऊपर लेना पड़ता है, इस कार्य में कम समुन्नत व्यक्तियों के पतन की पूरा आशंका रहती है॥ १ ॥

गुरू क्रोध मूर्त्ति हो तो उनमें नृसिंह भगवान की भावना, गुरू लोभ मूर्त हो तो उन में वामन भगवान की भावना रखें एवं गुरू में द्रोह चिंति हो तो उन में परशुराम की भावना रखें॥ २ ॥

गुरू ज्ञानी हो तो उनमें वेद व्यास जी की भावना रखें एवं गुरू

सत्य प्रतिज्ञ हो तो उन में पुरूषोत्तम श्रीराम की भावना, गुरू विज्ञानी हो तो उनमें श्रीकृष्ण की भावना रखें॥ ३ ॥

यदि गुरू भक्ति करने वाले हों तो उन में साक्षात् तपोनिष्ठ नारद मुनि के भाव से शिष्यों को अपने गुरू पूजन में श्रद्धा रखनी चाहिये॥ ४॥

बिना गुरू को नमस्कार किये जो भगवान को नमस्कार करते है, भगवान उनका मुख नहीं देखते है। गुरू का प्रसाद प्राप्त करने के बाद में भगवान का प्रसाद ग्रहण करते हैं, वे महापुण्य को प्राप्त करते है॥ ५॥

गुरू के प्रसाद की महिमा का कोई भी वर्णन नही कर सकता

है, इसके विपरीत आचरण करने वाला मनुष्य असंख्य पापों का भागी होता है।। ६ ।।

गुरू का वाक्य वेदों का मूल है, गुरू के चरणों की सेवा पूजा का मूल है, गुरू की सेवा धर्म का मूल है और गुरू की कृपा समस्त सुखों का मूल है।। ७ ।।

अचल और उत्तम अद्वय रूप गुरू शब्दार्थ ज्ञान को गीता के रूप में मंगल कथानक कहा गया है।। ८ ।।

जो चलायमान नहीं होते, ऐसे परमतत्व अचल रामजी एवं जो वरिष्ठ रूप श्रेष्ठ तत्वज्ञ सतगुरू उत्तम रामजी है, उनके ज्ञेय स्वरूप की अपरोक्षानुभूति ज्ञान को आत्मीय शब्दों में गीता रूप से कहा

गया हैं। इसी कारण इसका नाम "अचलोत्तम गुरू ज्ञान गीता" रखा गया है॥ १०॥

श्लोक-सीतानाथ समारम्भा रामानन्दाचार्य मध्यमाम।
अस्मदाचार्य पर्य्यन्तां वन्दे गुरू परम्पराम्॥ १०॥

श्री रामजी से लेकर श्रीमत् रामानन्दाचार्य के बीच तथा उनके बाद आजतक जो हमारे आचार्य हुए हैं, इस सारी गुरू परम्परा को मै साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूँ॥ १०॥

॥ दोहा समाप्ति॥

संवत् युग गुण शून्य चक्षु, वाम गुरू दिन लेख।
वसंत पंचमी माघ सुदी, छप्यो ग्रन्थ वर देख॥ १५१॥

शिव-गौरि संवाद को, भाष्य राम प्रकाश।
महावीर प्रसाद कर, गुरू गुन छप्यो विलास॥ १५२॥

॥ इति श्री अचलोत्तम गुरू ज्ञान गीता समाप्त॥

राग लूहर पद (१) भजन।

सतगुरू शरणे म्हे जास्यां, म्हे तो रामनाम गुण गास्यांए माय॥ टेर॥
माला फेरूं हरदम हेरूं, म्हे तो स्वासोश्वास रट लास्यांए माय॥ १॥
माला मणिया हरदम गणिया, म्हे तो तार में तार मिलास्यांए माय॥ २॥
इक्कीस हजार छः सौ धारा, म्हे तो आठ पहर चित्त लास्यांए माय॥ ३॥
षापमिटास्यां निज सुखपास्यां, म्हे तो मुक्ति मांहि समास्यांए माय॥ ४॥
रामप्रकाश गुरू गम स्मरण, म्हे तो सोहं ज्ञानपद पास्यांए माय॥ ५॥

राग लूहर पद (२) भजन।

रामधाम में म्हे अब जास्यां, म्हे तो गुरू गीता चित्त लास्यांए माय॥ टेर॥
रामचित्त लागा भवदुःख भागा, म्हे तो गुरू कृपा पद पास्यांए माय॥ १॥
राम लौ लागी दुर्मति भागी, म्हे तो गुरू-तत्व गुण गास्यांए माय॥ २॥
रामनाम ध्यावो आनन्द पावो, म्हे तो चार धाम फलले ध्यास्यांए माय॥ ३॥
नाम बिन सारा झूठ पसारा, म्हे तो रमता राम समास्यांए माय॥ ४॥
रामप्रकाश गुरू गम लय हो, म्हे तो तत्व स्वरूप लखास्यांए माय॥ ५॥

सर्व प्रकार की धार्मिक पुस्तकों के एकमात्र प्राचीनतम् प्रकाशक

बम्बई वाले पं. श्रीधर शिवलाल जी

ज्ञानसागर छापाखाना, पुराना शहर, किशनगढ़-सिटी, जिला अजमेर (राजस्थान)